श्रीमद्भागवत रसिक कुटुंब

श्री राम स्तुति (रामचरितमानस अंतर्गत)

ब्रह्मा जी द्वारा - बालकांड से

जय जय सुरनायक, जन सुखदायक, प्रनतपाल भगवंता।

गो द्विज हितकारी, जय असुरारी, सिधुंसुता प्रिय कंता॥

पालन सुर धरनी, अद्भुत करनी, मरम न जानइ कोई।

जो सहज कृपाला, दीनदयाला, करउ अनुग्रह सोई॥

हे देवताओं के स्वामी, सेवकों को सुख देनेवाले, शरणागत की रक्षा करनेवाले भगवान्! आपकी जय हो!

हे गो- ब्राह्मणोंका हित करनेवाले, असुरोंका विनाश करनेवाले, श्रीलक्ष्मीजी के प्रिय स्वामी! आपकी जय हो।हे देवता और पृथ्वी का पालन करनेवाले! आपकी लीला अद्भुत है, उसका भेद कोई नहीं जानता ।

ऐसे जो स्वभाव से ही कृपालु और दीनदयालु हैं, वे ही हम पर कृपा करें।

जय जय अबिनासी, सब घट बासी, ब्यापक परमानंदा।

अबिगत गोतीतं, चरित पुनीतं, माया रहित मुकुंदा॥

जेहि लागि बिरागी ,अति अनुरागी, बिगत मोह मुनिबृंदा।

निसि बासर ध्यावहिं, गुन गन गावहिं, जयति सच्चिदानंदा॥

हे अविनाशी, सबके हृदयमें निवास करनेवाले , सर्वव्यापक, परम आनन्दस्वरूप, अज्ञेय, इन्द्रियों से परे, पवित्रचरित्र, मायासे रहित मोक्षदाता! आपकी जय हो!इस लोक और परलोक के सब भोगों से विरक्त तथा मोहसे सर्वथा छूटे हुए ज्ञानी मुनिवृन्द भी अत्यन्त प्रेमी बनकर

जिनका रात-दिन ध्यान करते हैं और जिनके गुणों के समूहका गान करते हैं, उन सच्चिदानन्दकी जय हो ।

जेहिं सृष्टि उपाई, त्रिबिध बनाई, संग सहाय न दूजा।

सो करउ अघारी ,चिंत हमारी, जानिअ भगति न पूजा॥

जो भव भय भंजन, मुनि मन रंजन, गंजन बिपति बरूथा।

मन बच क्रम बानी ,छाड़ि सयानी, सरन सकल सुरजूथा॥

जिन्होंने बिना किसी दूसरे संगी अथवा सहायक के अकेले ही तीन प्रकारकी सृष्टि उत्पत्र की, वे पापोंका नाश करनेवाले भगवान् हमारी सुधि लें। क्योंकि हम न भक्ति जानते हैं, न पूजा।जो संसारके जन्ममृत्यु के भय का नाश करनेवाले, मुनियोंके मन को आनन्द देनेवाले और विपत्तियोंके समूहको नष्ट करनेवाले हैं, हम सब मन, वचन और कर्म से चतुराई छोड़कर उन भगवान की शरण आये हैं।

सारद श्रुति सेषा, रिषय असेषा, जा कहुँ कोउ नहि जाना।

जेहि दीन पिआरे, बेद पुकारे, द्रवउ सो श्रीभगवाना॥

भव बारिधि मंदर, सब बिधि सुंदर,गुनमंदिर सुखपुंजा।

मुनि सिद्ध सकल सुर, परम भयातुर, नमत नाथ पद कंजा॥

सरस्वती, वेद, शेषजी और सम्पूर्ण ऋषि कोई भी जिनको नहीं जानते, जिन्हें दीन प्रिय हैं, ऐसा वेद पुकारकर कहते हैं, वे ही श्रीभगवान हमपर दया करें। हे संसाररूपी समुद्रके लिये मन्दराचलरूप,सब प्रकारसे सुन्दर, गुणों के धाम और सुखों की राशि नाथ! आपके चरणकमलों में मुनि, सिद्ध और सारे देवता भय से अत्यन्त व्याकुल होकर नमस्कार करते हैं ।

दोहा:

जानि सभय सुर भूमि सुनि, बचन समेत सनेह।

गगनगिरा गंभीर भइ, हरनि सोक संदेह।। 186।।

ब्रह्मा जी द्वारा- लंका कांड से

जय राम सदा सुख धाम हरे। रघुनायक सायक चाप धरे।।

भव बारन दारन सिंह प्रभो। गुन सागर नागर नाथ बिभो॥1॥

भावार्थ - हे नित्य सुखधाम और (दु:खों को हरने वाले) हरि! हे धनुष-बाण धारण किए हुए रघुनाथजी! आपकी जय हो। हे प्रभो! आप भव (जन्म-मरण) रूपी हाथी को विदीर्ण करने के लिए सिंह के समान हैं। हे नाथ! हे सर्वव्यापक! आप गुणों के समुद्र और परम चतुर हैं॥1॥

तन काम अनेक अनूप छबी। गुन गावत सिद्ध मुनींद्र कबी।।

जसु पावन रावन नाग महा। खगनाथ जथा करि कोप गहा॥2॥

भावार्थ- आपके शरीर की अनेकों कामदेवों के समान, परंतु अनुपम छवि है। सिद्ध, मुनीश्वर और कवि आपके गुण गाते रहते हैं। आपका यश पवित्र है। आपने रावणरूपी महासर्प को गरुड़ की तरह क्रोध करके पकड़ लिया।।2।।

जन रंजन भंजन सोक भयं। गत क्रोध सदा प्रभु बोधमयं।।

अवतार उदार अपार गुनं। महि भार बिभंजन ग्यानघनं।।3।।

भावार्थ- हे प्रभो! आप सेवकों को आनंद देने वाले, शोक और भय का नाश करने वाले, सदा क्रोधरहित और नित्य ज्ञान स्वरूप हैं। आपका अवतार श्रेष्ठ, अपार दिव्य गुणों वाला, पृथ्वी का भार उतारने वाला और ज्ञान का समूह है।।3।।

अज ब्यापकमेकमनादि सदा। करुनाकर राम नमामि मुदा।।

रघुबंस बिभूषन दूषन हा। कृत भूप बिभीषन दीन रहा।।4।।

भावार्थ- (किंतु अवतार लेने पर भी) आप नित्य, अजन्मा, व्यापक, एक (अद्वितीय) और अनादि हैं। हे करुणा की खान श्रीरामजी! मैं आपको बड़े ही हर्ष के साथ नमस्कार करता हूँ। हे रघुकुल के आभूषण! हे दूषण राक्षस को मारने वाले तथा समस्त दोषों को हरने वाले! विभिषण दीन था, उसे आपने (लंका का) राजा बना दिया।।4।।

गुन ग्यान निधान अमान अजं। नित राम नमामि बिभुं बिरजं।।

भुजदंड प्रचंड प्रताप बलं। खल बृंद निकंद महा कुसलं।।5।।

भावार्थ- हे गुण और ज्ञान के भंडार! हे मानरहित! हे अजन्मा, व्यापक और मायिक विकारों से रहित श्रीराम! मैं आपको नित्य नमस्कार करता हूँ। आपके भुजदंडों का प्रताप और बल प्रचंड है। दुष्ट समूह के नाश करने में आप परम निपुण हैं।।5।।

बिनु कारन दीन दयाल हितं। छबि धाम नमामि रमा सहितं।।

भव तारन कारन काज परं। मन संभव दारुन दोष हरं।।6।।

भावार्थ- हे बिना ही कारण दीनों पर दया तथा उनका हित करने वाले और शोभा के धाम! मैं श्रीजानकीजी सहित आपको नमस्कार करता हूँ। आप भवसागर से तारने वाले हैं, कारणरूपा प्रकृति और कार्यरूप जगत् दोनों से परे हैं और मन से उत्पन्न होने वाले कठिन दोषों को हरने वाले हैं।।6।।

सर चाप मनोहर त्रोन धरं। जलजारुन लोचन भूपबरं।।

सुख मंदिर सुंदर श्रीरमनं। मद मार मुधा ममता समनं।।7।।

भावार्थ- आप मनोहर बाण, धनुष और तरकस धारण करने वाले हैं। (लाल) कमल के समान रक्तवर्ण आपके नेत्र हैं। आप राजाओं में श्रेष्ठ, सुख के मंदिर, सुंदर, श्री (लक्ष्मीजी) के वल्लभ तथा मद (अहंकार), काम और झूठी ममता के नाश करने वाले हैं।।7।।

अनवद्य अखंड न गोचर गो। सब रूप सदा सब होइ न गो।।

इति बेद बदंति न दंतकथा। रबि आतप भिन्नमभिन्न जथा।।8।।

भावार्थ- आप अनिन्द्य या दोषरहित हैं, अखंड हैं, इंद्रियों के विषय नहीं हैं। सदा सर्वरूप होते हुए भी आप वह सब कभी हुए ही नहीं, ऐसा वेद कहते हैं। यह (कोई) दंतकथा (कोरी कल्पना) नहीं है। जैसे सूर्य और सूर्य का प्रकाश अलग-अलग हैं और अलग नहीं भी है, वैसे ही आप भी संसार से भिन्न तथा अभिन्न दोनों ही हैं।।8।।

कृतकृत्य बिभो सब बानर ए। निरखंति तनानन सादर ए।।

धिग जीवन देव सरीर हरे। तव भक्ति बिना भव भूलि परे।।9।।

भावार्थ- हे व्यापक प्रभो! ये सब वानर कृतार्थ रूप हैं, जो आदरपूर्वक ये आपका मुख देख रहे हैं। (और) हे हरे! हमारे (अमर) जीवन और देव (दिव्य) शरीर को धिक्कार है, जो हम आपकी भक्ति से रहित हुए संसार में (सांसारिक विषयों में) भूले पड़े हैं।।9।।

अब दीनदयाल दया करिऐ। मति मोरि बिभेदकरी हरिऐ।।

जेहि ते बिपरीत क्रिया करिऐ। दु:ख सो सुख मानि सुखी चरिऐ।।10।।

भावार्थ- हे दीनदयालु! अब दया कीजिए और मेरी उस विभेद उत्पन्न करने वाली बुद्धि को हर लीजिए, जिससे मैं विपरीत कर्म करता हूँ और जो दु:ख है, उसे सुख मानकर आनंद से विचरता हूँ।।10।।

खल खंडन मंडन रम्य छमा। पद पंकज सेवित संभु उमा।।

नृप नायक दे बरदानमिदं। चरनांबुज प्रेमु सदा सुभदं।।11।।

भावार्थ- आप दुष्टों का खंडन करने वाले और पृथ्वी के रमणीय आभूषण हैं। आपके चरणकमल श्री शिव-पार्वती द्वारा सेवित हैं। हे राजाओं के महाराज! मुझे यह वरदान दीजिए कि आपके चरणकमलों में सदा मेरा कल्याणदायक (अनन्य) प्रेम हो।।11।।

बिनय कीन्ह चतुरानन प्रेम पुलक अति गात।

सोभासिंधु बिलोकत लोचन नहीं अघात।।111।।

भावार्थ- इस प्रकार ब्रह्माजी ने अत्यंत प्रेम-पुलकित शरीर से विनती की। शोभा के समुद्र श्रीरामजी के दर्शन करते-करते उनके नेत्र तृप्त ही नहीं होते थे।।111।।

ऋषि अत्रि द्वारा- अरण्यकांड से

नमामि भक्त वत्सलं। कृपालु शील कोमलं॥

भजामि ते पदांबुजं। अकामिनां स्वधामदं॥1॥

भावार्थ- हे भक्त वत्सल! हे कृपालु! हे कोमल स्वभाव वाले! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। निष्काम पुरुषों को अपना परमधाम देने वाले आपके चरण कमलों को मैं भजता हूँ॥1॥

निकाम श्याम सुंदरं। भवांबुनाथ मंदरं॥

प्रफुल्ल कंज लोचनं। मदादि दोष मोचनं॥2॥

भावार्थ- आप नितान्त सुंदर श्याम, संसार (आवागमन) रूपी समुद्र को मथने के लिए मंदराचल रूप, फूले हुए कमल के समान नेत्रों वाले और मद आदि दोषों से छुड़ाने वाले हैं॥2॥

प्रलंब बाहु विक्रमं। प्रभोऽप्रमेय वैभवं॥

निषंग चाप सायकं। धरं त्रिलोक नायकं॥3॥

भावार्थ -हे प्रभो! आपकी लंबी भुजाओं का पराक्रम और आपका ऐश्वर्य अप्रमेय (बुद्धि के परे अथवा असीम) है। आप तरकस और धनुष-बाण धारण करने वाले तीनों लोकों के स्वामी,॥3॥

दिनेश वंश मंडनं। महेश चाप खंडनं॥

मुनींद्र संत रंजनं। सुरारि वृंद भंजनं॥4॥

भावार्थ- सूर्यवंश के भूषण, महादेवजी के धनुष को तोड़ने वाले, मुनिराजों और संतों को आनंद देने वाले तथा देवताओं के शत्रु असुरों के समूह का नाश करने वाले हैं॥4॥

मनोज वैरि वंदितं। अजादि देव सेवितं॥

विशुद्ध बोध विग्रहं। समस्त दूषणापहं॥5॥

भावार्थ- आप कामदेव के शत्रु महादेवजी के द्वारा वंदित, ब्रह्मा आदि देवताओं से सेवित, विशुद्ध ज्ञानमय विग्रह और समस्त दोषों को नष्ट करने वाले हैं॥5॥

नमामि इंदिरा पतिं। सुखाकरं सतां गतिं॥

भजे सशक्ति सानुजं। शची पति प्रियानुजं॥6॥

भावार्थ- हे लक्ष्मीपते! हे सुखों की खान और सत्पुरुषों की एकमात्र गति! मैं आपको नमस्कार करता हूँ! हे शचीपति (इन्द्र) के प्रिय छोटे भाई (वामनजी)! स्वरूपा-शक्ति श्री सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणजी सहित आपको मैं भजता हूँ॥6॥

त्वदंघ्रि मूल ये नराः। भजंति हीन मत्सराः॥

पतंति नो भवार्णवे। वितर्क वीचि संकुले॥7॥

भावार्थ- जो मनुष्य मत्सर (डाह) रहित होकर आपके चरण कमलों का सेवन करते हैं, वे तर्क-वितर्क (अनेक प्रकार के संदेह) रूपी तरंगों से पूर्ण संसार रूपी समुद्र में नहीं गिरते (आवागमन के चक्कर में नहीं पड़ते)॥7॥

विविक्त वासिनः सदा। भजंति मुक्तये मुदा॥

निरस्य इंद्रियादिकं। प्रयांतिते गतिं स्वकं॥8॥

भावार्थ- जो एकान्तवासी पुरुष मुक्ति के लिए, इन्द्रियादि का निग्रह करके (उन्हें विषयों से हटाकर) प्रसन्नतापूर्वक आपको भजते हैं, वे स्वकीय गति को (अपने स्वरूप को) प्राप्त होते हैं॥8॥

तमेकमद्भुतं प्रभुं। निरीहमीश्वरं विभुं॥

जगद्गुरुं च शाश्वतं। तुरीयमेव केवलं॥9॥

भावार्थ- उन (आप) को जो एक (अद्वितीय), अद्भुत (मायिक जगत् से विलक्षण), प्रभु (सर्वसमर्थ), इच्छारहित, ईश्वर (सबके स्वामी), व्यापक, जगद्गुरु, सनातन (नित्य), तुरीय (तीनों गुणों से सर्वथा परे) और केवल (अपने स्वरूप में स्थित) हैं॥9॥

भजामि भाव वल्लभं। कुयोगिनां सुदुर्लभं॥

स्वभक्त कल्प पादपं। समं सुसेव्यमन्वहं॥10॥

भावार्थ- (तथा) जो भावप्रिय, कुयोगियों (विषयी पुरुषों) के लिए अत्यन्त दुर्लभ, अपने भक्तों के लिए कल्पवृक्ष (अर्थात् उनकी समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले), सम (पक्षपातरहित) और सदा सुखपूर्वक सेवन करने योग्य हैं, मैं निरंतर भजता हूँ॥10॥

अनूप रूप भूपतिं। नतोऽहमुर्विजा पतिं॥

प्रसीद मे नमामि ते। पदाब्ज भक्ति देहि मे॥11॥

भावार्थ- हे अनुपम सुंदर! हे पृथ्वीपति! हे जानकीनाथ! मैं आपको प्रणाम करता हूँ। मुझ पर प्रसन्न होइए, मैं आपको नमस्कार करता हूँ। मुझे अपने चरण कमलों की भक्ति दीजिए॥11॥

पठंति ये स्तवं इदं। नरादरेण ते पदं॥

व्रजंति नात्र संशयं। त्वदीय भक्ति संयुताः॥12॥

भावार्थ- जो मनुष्य इस स्तुति को आदरपूर्वक पढ़ते हैं, वे आपकी भक्ति से युक्त होकर आपके परम पद को प्राप्त होते हैं, इसमें संदेह नहीं॥12॥

बिनती करि मुनि नाइ सिरु कह कर जोरि बहोरि।

चरन सरोरुह नाथ जनि कबहुँ तजै मति मोरि॥4॥

भावार्थ- मुनि ने (इस प्रकार) विनती करके और फिर सिर नवाकर, हाथ जोड़कर कहा- हे नाथ! मेरी बुद्धि आपके चरण कमलों को कभी न छोड़े॥4॥

इंद्रदेव द्वारा- लंका कांड से

जय राम सोभा धाम। दायक प्रनत बिश्राम॥

धृत त्रोन बर सर चाप। भुजदंड प्रबल प्रताप।।1।।

भावार्थ- शोभा के धाम, शरणागत को विश्राम देनेवाले, श्रेष्ठ तरकस, धनुष और बाण धारण किए हुए, प्रबल प्रतापी भुजदंडों वाले श्री रामचंद्र जी की जय हो!

जय दूषनारि खरारि। मर्दन निसाचर धारि॥

यह दुष्ट मारेउ नाथ। भए देव सकल नाथ।।2।।

भावार्थ- हे खरदूषण के शत्रु और राक्षसों की सेना के मर्दन करने वाले! आपकी जय हो! हे नाथ! आपने इस दुष्ट को मारा, जिससे सब देवता सनाथ (सुरक्षित) हो गए।

जय हरन धरनी भार। महिमा उदार अपार॥

जय रावनारि कृपाल। किए जातुधान बिहाल।।3।।

भावार्थ-हे भूमि का भार हरने वाले! हे अपार श्रेष्ठ महिमावाले! आपकी जय हो। हे रावण के शत्रु! हे कृपालु! आपकी जय हो। आपने राक्षसों को बेहाल (तहस-नहस) कर दिया।

लंकेस अति बल गर्ब। किए बस्य सुर गंधर्ब॥

मुनि सिद्ध नर खग नाग। हठि पंथ सब कें लाग।।4।।

भावार्थ-लंकापति रावण को अपने बल का बहुत घमंड था। उसने देवता और गंधर्व सभी को अपने वश में कर लिया था और वह मुनि, सिद्ध, मनुष्य, पक्षी और नाग आदि सभी के हठपूर्वक (हाथ धोकर) पीछे पड़ गया था।

परद्रोह रत अति दुष्ट। पायो सो फलु पापिष्ट॥

अब सुनहु दीन दयाल। राजीव नयन बिसाल।।5।।

भावार्थ- वह दूसरों से द्रोह करने में तत्पर और अत्यंत दुष्ट था। उस पापी ने वैसा ही फल पाया। अब हे दीनों पर दया करनेवाले! हे कमल के समान विशाल नेत्रोंवाले! सुनिए।

मोहि रहा अति अभिमान। नहिं कोउ मोहि समान॥

अब देखि प्रभु पद कंज। गत मान प्रद दुःख पुंज।।6।।

भावार्थ- मुझे अत्यंत अभिमान था कि मेरे समान कोई नहीं है, पर अब प्रभु (आप) के चरण कमलों के दर्शन करने से दुःख-समूह का देने वाला मेरा वह अभिमान जाता रहा।

कोउ ब्रह्म निर्गुन ध्याव। अब्यक्त जेहि श्रुति गाव॥

मोहि भाव कोसल भूप। श्रीराम सगुन सरूप।।7।।

भावार्थ- कोई उन निर्गुन ब्रह्म का ध्यान करते हैं जिन्हें वेद अव्यक्त (निराकार) कहते हैं। परंतु हे श्री राम! मुझे तो आपका यह सगुण कोसलराज-स्वरूप ही प्रिय लगता है।

बैदेहि अनुज समेत। मम हृदयँ करहु निकेत॥

मोहि जानिऐ निज दास। दे भक्ति रमानिवास।।8।।

भावार्थ- जानकी और छोटे भाई लक्ष्मण सहित मेरे हृदय में अपना घर बनाइए। हे रमानिवास! मुझे अपना दास समझिए और अपनी भक्ति दीजिए।

दे भक्ति रमानिवास त्रास हरन सरन सुखदायकं।

सुख धाम राम नमामि काम अनेक छबि रघुनायकं।।9।।

सुर बृंद रंजन द्वंद भंजन मनुजतनु अतुलितबलं।

ब्रह्मादि संकर सेब्य राम नमामि करुना कोमलं।।10।।

भावार्थ- हे रमानिवास! हे शरणागत के भय को हरने वाले और उसे सब प्रकार का सुख देने वाले! मुझे अपनी भक्ति दीजिए। हे सुख के धाम! हे अनेकों कामदेवों की छविवाले रघुकुल के स्वामी राम! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे देवसमूह को आनंद देनेवाले, (जन्म-मृत्यु, हर्ष-विषाद, सुख-दुःख आदि) द्वंद्वों के नाश करने वाले, मनुष्य शरीरधारी, अतुलनीय बलवाले, ब्रह्मा और शिव आदि से सेवनीय, करुणा से कोमल राम! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

अब करि कृपा बिलोकि मोहि आयसु देहु कृपाल।

काह करौं सुनि प्रिय बचन बोले दीनदयाल॥ 113॥

भावार्थ- हे कृपालु! अब मेरी ओर कृपा करके (कृपा दृष्टि से) देखकर आज्ञा दीजिए कि मैं क्या (सेवा) करूँ! इंद्र के ये प्रिय वचन सुनकर दीनदयालु राम बोले॥ 113॥

चारों वेदों द्वारा- उत्तरकांड से

जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने।

दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुज बल हने॥

अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुःख दहे।

जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे॥1॥

भावार्थ-सगुण और निर्गुण रूप! हे अनुपम रूप-लावण्ययुक्त! हे राजाओं के शिरोमणि! आपकी जय हो। आपने रावण आदि प्रचण्ड, प्रबल और दुष्ट निशाचरों को अपनी भुजाओं के बल से मार डाला। आपने मनुष्य अवतार लेकर संसार के भार को नष्ट करके अत्यंत कठोर दुःखों को भस्म कर दिया। हे दयालु! हे शरणागत की रक्षा करने वाले प्रभो! आपकी जय हो। मैं शक्ति (सीता जी) सहित शक्तिमान आपको नमस्कार करता हूँ॥1॥

तव बिषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे।

भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुननि भरे॥

जे नाथ करि करुना बिलोकि त्रिबिधि दुःख ते निर्बहे।

भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे॥2॥

भावार्थ- हे हरे! आपकी दुस्तर माया के वशीभूत होने के कारण देवता, राक्षस, नाग, मनुष्य और चर, अचर सभी काल कर्म और गुणों से भरे हुए (उनके वशीभूत हुए) दिन-रात अनन्त भव (आवागमन) के मार्ग में भटक रहे हैं। हे नाथ! इनमें से जिनको आपने कृपा करके (कृपादृष्टि) से देख लिया, वे (माया जनित) तीनों प्रकार के दुःखों से छूट गए। हे जन्म-मरण के श्रम को काटने में कुशल श्री राम जी! हमारी रक्षा कीजिए। हम आपको नमस्कार करते हैं॥2॥

जे ग्यान मान बिमत्त तव भव हरनि भक्ति न आदरी।

ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी॥

बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे।

जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे॥3॥

भावार्थ- जिन्होंने मिथ्या ज्ञान के अभिमान में विशेष रूप से मतवाले होकर जन्म-मृत्यु (के भय) को हरने वाली आपकी भक्ति का आदर नहीं किया, हे हरि! उन्हें देव-दुर्लभ (देवताओं को भी बड़ी कठिनता से प्राप्त होने वाले, ब्रह्मा आदि के) पद को पाकर भी हम उस पद से नीचे गिरते देखते हैं (परंतु), जो सब आशाओं को छोड़कर आप पर विश्वास करके आपके दास हो रहते हैं, वे केवल आपका नाम ही जपकर बिना ही परिश्रम भवसागर से तर जाते हैं। हे नाथ! ऐसे आपका हम स्मरण करते हैं॥3॥

जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी।

नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी॥

ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटक किन लहे।

पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे॥4॥

भावार्थ-जो चरण शिव जी और ब्रह्मा जी के द्वारा पूज्य हैं, तथा जिन चरणों की कल्याणमयी रज का स्पर्श पाकर (शिला बनी हुई) गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या तर गई, जिन चरणों के नख से मुनियों द्वारा वन्दित, त्रैलोक्य को पवित्र करने वाली देवनदी गंगाजी निकलीं और ध्वजा, वज्र अंकुश और कमल, इन चिह्नों से युक्त जिन चरणों में वन में फिरते समय काँटे चुभ जाने से घट्ठे पड़ गए हैं, हे मुकुन्द! हे राम! हे रमापति! हम आपके उन्हीं दोनों चरणकमलों को नित्य भजते रहते हैं॥4॥

अब्यक्तमूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने।

षट कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने॥

फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे।

पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे॥5॥

भावार्थ-वेद शास्त्रों ने कहा है कि जिसका मूल अव्यक्त (प्रकृति) है, जो (प्रवाह रूप से) अनादि है, जिसके चार त्वचाएँ, छह तने, पच्चीस शाखाएँ और अनेकों पत्ते और बहुत से फूल हैं, जिसमें कड़वे और मीठे दो प्रकार के फल लगे हैं, जिस पर एक ही बेल है, जो उसी के आश्रित रहती है, जिसमें नित्य नए पत्ते और फूल निकलते रहते हैं, ऐसे संसार वृक्ष स्वरूप (विश्व रूप में प्रकट) आपको हम नमस्कार करते हैं॥5॥

जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मनपर ध्यावहीं।

ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं॥

करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर मागहीं।

मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं॥6॥

भावार्थ- ब्रह्म अजन्मा है, अद्वैत है, केवल अनुभव से ही जाना जाता है और मन से परे है- (जो इस प्रकार कहकर उस) ब्रह्म का ध्यान करते हैं, वे ऐसा कहा करें और जाना करें, किंतु हे नाथ! हम तो नित्य आपका सगुण यश ही गाते हैं। हे करुणा के धाम प्रभो! हे सद्गुणों की खान! हे देव! हम यह वर माँगते हैं कि मन, वचन और कर्म से विकारों को त्यागकर आपके चरणों में ही प्रेम करें॥6॥

सब के देखत बेदन्ह बिनती कीन्हि उदार।

अंतर्धान भए पुनि गए ब्रह्म आगार॥13 क॥

भावार्थ- वेदों ने सबके देखते यह श्रेष्ठ विनती की। फिर वे अंतर्धान हो गए और ब्रह्मलोक को चले गए॥13 (क)॥

बैनतेय सुनु संभु तब आए जहँ रघुबीर।

बिनय करत गदगद गिरा पूरित पुलक सरीर॥13 ख॥

भावार्थ:-काकभुशुण्डिजी कहते हैं- हे गरुड़जी ! सुनिए, तब शिवजी वहाँ आए जहाँ श्री रघुवीर थे और गद्गद् वाणी से स्तुति करने लगे। उनका शरीर पुलकावली से पूर्ण हो गया-॥13 (ख)॥

महादेव द्वारा- उत्तरकांड से

जय राम रमारमनं समनं। भवताप भयाकुल पाहि जनं॥

अवधेस सुरेस रमेस बिभो। सरनागत मागत पाहि प्रभो॥1॥

भावार्थ:-हे राम! हे रमारमण (लक्ष्मीकांत)! हे जन्म-मरण के संताप का नाश करने वाले! आपकी जय हो, आवागमन के भय से व्याकुल इस सेवक की रक्षा कीजिए। हे अवधपति! हे देवताओं के स्वामी! हे रमापति! हे विभो! मैं शरणागत आपसे यही माँगता हूँ कि हे प्रभो! मेरी रक्षा कीजिए॥1॥

*** दससीस बिनासन बीस भुजा। कृत दूरि महा महि भूरि रुजा॥**

रजनीचर बृंद पतंग रहे। सर पावक तेज प्रचंड दहे॥2॥

भावार्थ:-हे दस सिर और बीस भुजाओं वाले रावण का विनाश करके पृथ्वी के सब महान् रोगों (कष्टों) को दूर करने वाले श्री रामजी! राक्षस समूह रूपी जो पतंगे थे, वे सब आपके बाण रूपी अग्नि के प्रचण्ड तेज से भस्म हो गए॥2॥

*** महि मंडल मंडन चारुतरं। धृत सायक चाप निषंग बरं।**

मद मोह महा ममता रजनी। तम पुंज दिवाकर तेज अनी॥3॥

भावार्थ:-आप पृथ्वी मंडल के अत्यंत सुंदर आभूषण हैं, आप श्रेष्ठ बाण, धनुष और तरकस धारण किए हुए हैं। महान् मद, मोह और ममता रूपी रात्रि के अंधकार समूह के नाश करने के लिए आप सूर्य के तेजोमय किरण समूह हैं॥3॥

*** मनजात किरात निपात किए। मृग लोग कुभोग सरेन हिए॥**

हति नाथ अनाथनि पाहि हरे। बिषया बन पावँर भूलि परे॥4॥

भावार्थ:-कामदेव रूपी भील ने मनुष्य रूपी हिरनों के हृदय में कुभोग रूपी बाण मारकर उन्हें गिरा दिया है। हे नाथ! हे (पाप-ताप का हरण करने वाले) हरे ! उसे मारकर विषय रूपी वन में भूल पड़े हुए इन पामर अनाथ जीवों की रक्षा कीजिए॥4॥

***बहु रोग बियोगन्हि लोग हए। भवदंघ्रि निरादर के फल ए॥**

भव सिंधु अगाध परे नर ते। पद पंकज प्रेम न जे करते॥5॥

भावार्थ:-लोग बहुत से रोगों और वियोगों (दुःखों) से मारे हुए हैं। ये सब आपके चरणों के निरादर के फल हैं। जो मनुष्य आपके चरणकमलों में प्रेम नहीं करते, वे अथाह भवसागर में पड़े हैं॥5॥

अति दीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्ह कें पद पंकज प्रीति नहीं॥

अवलंब भवंत कथा जिन्ह कें। प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह कें॥6॥

भावार्थ:-जिन्हें आपके चरणकमलों में प्रीति नहीं है वे नित्य ही अत्यंत दीन, मलिन (उदास) और दुःखी रहते हैं और जिन्हें आपकी लीला कथा का आधार है, उनको संत और भगवान् सदा प्रिय लगने लगते हैं॥6॥

*** नहिं राग न लोभ न मान सदा। तिन्ह कें सम बैभव वा बिपदा॥**

एहि ते तव सेवक होत मुदा। मुनि त्यागत जोग भरोस सदा॥7॥

भावार्थ:-उनमें न राग (आसक्ति) है, न लोभ, न मान है, न मद। उनको संपत्ति सुख और विपत्ति (दुःख) समान है। इसी से मुनि लोग योग (साधन) का भरोसा सदा के लिए त्याग देते हैं और प्रसन्नता के साथ आपके सेवक बन जाते हैं॥7॥

***करि प्रेम निरंतर नेम लिएँ। पद पंकज सेवत सुद्ध हिएँ॥**

सम मानि निरादर आदरही। सब संतु सुखी बिचरंति मही॥8॥

भावार्थ:-वे प्रेमपूर्वक नियम लेकर निरंतर शुद्ध हृदय से आपके चरणकमलों की सेवा करते रहते हैं और निरादर और आदर को समान मानकर वे सब संत सुखी होकर पृथ्वी पर विचरते हैं॥8॥

*** मुनि मानस पंकज भृंग भजे। रघुबीर महा रनधीर अजे॥**

तव नाम जपामि नमामि हरी। भव रोग महागद मान अरी॥9॥

भावार्थ:-हे मुनियों के मन रूपी कमल के भ्रमर! हे महान् रणधीर एवं अजेय श्री रघुवीर! मैं आपको भजता हूँ (आपकी शरण ग्रहण करता हूँ) हे हरि! आपका नाम जपता हूँ और आपको नमस्कार करता हूँ। आप जन्म-मरण रूपी रोग की महान् औषध और अभिमान के शत्रु हैं॥9॥

*** गुन सील कृपा परमायतनं। प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं॥**

रघुनंद निकंदय द्वंद्वघनं। महिपाल बिलोकय दीन जनं॥10॥

भावार्थ:-आप गुण, शील और कृपा के परम स्थान हैं। आप लक्ष्मीपति हैं, मैं आपको निरंतर प्रणाम करता हूँ। हे रघुनन्दन! (आप जन्म-मरण, सुख-दुःख, राग-द्वेषादि) द्वंद्व समूहों का नाश कीजिए। हे पृथ्वी का पालन करने वाले राजन्। इस दीन जन की ओर भी दृष्टि डालिए॥10॥

बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग।

पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग॥14 क॥

भावार्थ:-मैं आपसे बार-बार यही वरदान माँगता हूँ कि मुझे आपके चरणकमलों की अचल भक्ति और आपके भक्तों का सत्संग सदा प्राप्त हो। हे लक्ष्मीपते! हर्षित होकर मुझे यही दीजिए॥

*** बरनि उमापति राम गुन हरषि गए कैलास।**

तब प्रभु कपिन्ह दिवाए सब बिधि सुखप्रद बास॥14 ख॥

भावार्थ:-श्री रामचंद्रजी के गुणों का वर्णन करके उमापति महादेवजी हर्षित होकर कैलास को चले गए। तब प्रभु ने वानरों को सब प्रकार से सुख देने वाले डेरे दिलवाए॥14 (ख)॥

महादेव द्वारा - लंका कांड से

मामभिरक्षय रघुकुल नायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक॥

मोह महा घन पटल प्रभंजन। संसय बिपिन अनल सुर रंजन॥

भावार्थ-हे रघुकुल के स्वामी! सुंदर हाथों में श्रेष्ठ धनुष और सुंदर बाण धारण किए हुए आप मेरी रक्षा कीजिए। आप महामोहरूपी मेघसमूह के (उड़ाने के) लिए प्रचंड पवन हैं, संशयरूपी वन के (भस्म करने के) लिए अग्नि हैं और देवताओं को आनंद देने वाले हैं।

अगुन सगुन गुन मंदिर सुंदर। भ्रम तम प्रबल प्रताप दिवाकर॥

काम क्रोध मद गज पंचानन। बसहु निरंतर जन मन कानन॥

भावार्थ- आप निर्गुण, सगुण, दिव्य गुणों के धाम और परम सुंदर हैं। भ्रमरूपी अंधकार के (नाश के) लिए प्रबल प्रतापी सूर्य हैं। काम, क्रोध और मदरूपी हाथियों के (वध के) लिए सिंह के समान आप इस सेवक के मनरूपी वन में निरंतर वास कीजिए।

बिषय मनोरथ पुंज कंज बन। प्रबल तुषार उदार पार मन॥

भव बारिधि मंदर परमं दर। बारय तारय संसृति दुस्तर॥

भावार्थ- विषयकामनाओं के समूहरूपी कमलवन के (नाश के) लिए आप प्रबल पाला हैं, आप उदार और मन से परे हैं। भवसागर (को मथने) के लिए आप मंदराचल पर्वत हैं। आप हमारे परम भय को दूर कीजिए और हमें दुस्तर संसार सागर से पार कीजिए।

स्याम गात राजीव बिलोचन। दीन बंधु प्रनतारति मोचन॥

अनुज जानकी सहित निरंतर। बसहु राम नृप मम उर अंतर॥

मुनि रंजन महि मंडल मंडन। तुलसिदास प्रभु त्रास बिखंडन॥

भावार्थ- श्यामसुंदर-शरीर! हे कमलनयन! हे दीनबंधु! हे शरणागत को दुःख से छुड़ाने वाले! हे राजा राम! आप छोटे भाई लक्ष्मण और जानकी सहित निरंतर मेरे हृदय के अंदर निवास कीजिए। आप मुनियों को आनंद देने वाले, पृथ्वीमंडल के भूषण, तुलसीदास के प्रभु और भय का नाश करनेवाले हैं।

नाथ जबहिं कोसलपुरीं होइहि तिलक तुम्हार।

कृपासिंधु मैं आउब देखन चरित उदार॥ 115॥

भावार्थ

हे नाथ! जब अयोध्यापुरी में आपका राजतिलक होगा, तब हे कृपासागर! मैं आपकी उदार लीला देखने आऊँगा॥ 115॥